ISSN 2277 - 7865
Price : 50.00

तित्थयर

वर्ष : ३७ अंक : ०७ अक्टूबर २०१३

॥ जैन भवन ॥

शुभ कामनाओं सहित —

जिसने दुःख को समाप्त कर दिया है उसे मोह नहीं,
जिसने मोह को मिटा दिया है उसे तृष्णा नहीं है।
जिसने तृष्णा का नाश कर दिया है उसके पास
कुछ भी परिग्रह नहीं है, वह अकिंचन है।

Nivesh Invest Pte. Ltd.
Mumbai-Singapore-Honkong-Shanghai

ISSN 2277 - 7865

तित्थयर

श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्रिका

वर्ष - ३७ अंक - ७ अक्टूबर २०१३

लेख, पुस्तक समीक्षा तथा पत्रिका से सम्बन्धित पत्र व्यवहार के लिय
पता - Editor : Titthayar, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Phone : (033) 2268-2655, 2272-9028,
Email : jainbhawan@rediffmail.com

विज्ञापन तथा सदस्यता के लिये कृपया सम्पर्क करें --
Secretary, Jain Bhawan, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007
Life Membership : India : Rs. 5000.00. Yearly : 500.00
Foreign : $ 500

Published by Dr. Lata Bothra on behalf of Jain Bhawan from
P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone : 2268-2655
and printed by her at Arunima Printing Works, 81, Simla Street
Kolkata - 700 006 Phone : 2241-1006

संपादन

डॉ. लता बोथरा

पी-एच.डी., डी.लिट्

॥ जैन भवन ॥

Editorial Board :

1. Dr. Satyaranjan Banerjee
2. Dr. Sagarmal Jain
3. Dr. Lata Bothra
4. Dr. Jitendra B. Shah
5. Prof. Anupam Jash
6. Dr. Abhijit Bhattacharyya
7. Dr. Peter Flugel
8. Dr. Rajiv Dugar
9. Smt. Jasmine Dudhoria
10 Smt. Pushpa Boyd

अनुक्रमणिका

क्र. सं. लेख	लेखक	पृ. सं.
१. जैन अपभ्रंश प्रबन्धमूलक वाङ्मय: एक दृष्टि	डॉ. अभिजीत भट्टाचार्य	२८५
२. कुवलय माला	श्री केवल मुनि	३०२

ISSN 2277 - 7865

कवरपृष्ठ : मंगोलिया से प्राप्त देवी सरस्वती का चित्र

Composed by:
Jain Bhawan Computer Centre, P-25, Kalakar Street Kolkata - 700 007

जैन अपभ्रंश प्रबन्धमूलक वाङ्मयः एक दृष्टि

डॉ. अभिजीत भट्टाचार्य

अपभ्रंश साहित्य का सविशेष अंश, जैन साहित्यकारों, चिन्तकों तथा दार्शनिकों का आभारी है। अपभ्रंश कृतियों की निर्मिति, उनके विकास तथा केन्द्रीय शिल्प-विधान में जैन चिन्तन तथा सृजन का विशेष योगदान रहा है। ऐसी अनेक कृतियाँ इस प्रकार मिलती हैं, जिनमें सर्गबद्धता के साथ-साथ आद्यन्त एक ही कथा-प्रवाह की धारा बनी रहती है। वैशिष्ट्य के दृष्टिकोण से एक या एकाधिक व्यक्तिसूत्रों में ग्रथित इन जैन अपभ्रंश रचनाओं में प्रबन्ध काव्य की सारी विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं।

जैन अपभ्रंश प्रबन्धमूलक रचनाओं में संरचनात्मक दृष्टि से कई उपादानगत वैशिष्ट्य हमें दिखाई देते हैं। ऐसी अपभ्रंश रचनाएँ सर्ग या अध्याय के आधार पर जहाँ विशेष रूप से प्रयुक्त होती हैं, वहीं सर्ग की उपस्थिति के चलते अपभ्रंश-कृतियों में सन्धि का प्रयोग देखने को मिलता है। 'कडवकों की सम्पृक्ति' (intercongenial cognition) से प्रत्येक सन्धि की पूर्णता निर्धारित होती है। कोई एक छन्द (उदाहरण स्वरूप प्रज्झटिका) या कुछ अन्य रहता है तथा अन्त में प्रायः घत्ता आदि छन्द अवश्य रहता है। कडवकों की सन्धियों में संख्या समान या फिर अनिश्चित रहती है। "सन्धि के प्रारम्भ में ध्रुवक के रूप में एक घत्ता प्रायः रहता है, जिसमें बहुत ही संक्षेप में सन्धि की कथा का संकेत रहता है। इन कृतियों का प्रधान स्वर धार्मिक है * * * * *।"[1]

1. तोमर, डॉ. रामसिंह, प्राकृत-अपभ्रंश साहित्य और उसका हिन्दी साहित्य पर प्रभाव, हिन्दी परिषद प्रकाशन, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, 1998, पृष्ठ 96

अपभ्रंश भाषा के अन्तर्गत, जहाँ तक प्रबन्धात्मक या प्रबन्धमूलक रचनाओं का सवाल है, वहाँ जैन साहित्यकारों की बड़ी श्लाघ्य भूमिका रही है। जिन महाकाव्यों की रचना जैन साहित्यकारों ने की हैं, उसकी भाषा साहित्यिक अपभ्रंश रही है। इस पर विशेषज्ञों का कथन है कि–

"The epics written by Jaina poets in literary Apabhramsa depicts the highest form of poetic assemblance in the language. The linguistic and epistemological as well as literary blend of the usage thereby reflects an enduring insightful view of the creative facade. Swayambhu is the most (chronologically) ancient poet of this unique section. His insight into the poetic genre has a deep rooted transcendental experience, which remains unique till date."[2]

स्वयंभू की भाषा एवं रचनात्मक प्रौढ़ता इस बात के प्रमाण हैं कि भाषा-स्तर पर काफी पहले ही यह धारा प्रारम्भ हो चुकी थी। स्वयंभू की कृतियों के पठन से यह बात स्पष्ट हो जाती है।

आगे हम अपभ्रंश प्रबन्धमूलक काव्य के प्रमुख कवियों के बारे में आलोकपात करेंगे।

स्वयंभू :-

पहले ही इस बात का उल्लेख कर देना आवश्यक है कि स्वयंभू ने काव्य में अपने पूर्ववर्ती कई अपभ्रंश के कवियों का उल्लेख किया है। 'यह सही है कि स्वयंभू से पूर्ववर्ती कई ऐसे कवि थे, जिन्होंने अपने काव्य चिन्तन के द्वारा अपभ्रंश में प्रबन्धकाव्यों की रचना की।'

स्वयंभू छन्द तथा 'रिट्ठणेमिचरिउ' के अन्तर्गत कई कवियों का नामोल्लेख किया गया है। इनमें चतुर्मुख (4.3, 71, 83, 86, 112),

2. Bellioni, Antonio, 'On the Transliteral formations of Apabhramsa', article published in the Journal for Indic Studies, July 1992, p. 48-49.

धूर्त (4·6), माउरदेव (4·9), धनदेव (4·11), आर्यदेव (4·13), छइल्ल (4·15), गोइन्द (4·17, 19, 21, 24, 26), शुद्धशील (4·18) तथा जिनदास (4·28) के पद्य पाए जाते हैं। डॉ. रामसिंह तोमर ने अपने ग्रन्थ में इस प्रसंग को उठाया है कि इनमें कई ऐसे रचनाकार हैं, जिन्होंने कृष्ण-कथा से संबंधित कई पद्यों की रचना की हैं। यद्यपि इनका नामोल्लेख कहीं नहीं मिलता पर सहज सम्भाव्य है कि वे प्रबन्धात्मक रचनाओं से लिए गए हों।[3]

स्वयंभू की तीन कृतियाँ अभी प्रकाशित हैं। ये कृतियाँ हैं– पउमचरिउ, रिट्ठणेमिचरिउ तथा स्वयंभू छन्द।[4] इन साहित्यिक रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दिया जा रहा है–

पउमचरिउ (पद्मचरित) :- जैन साहित्यिक कृतियों में प्राकृत में विमलसूरि का 'पउमचरिय' तथा संस्कृत में रविषेणाचार्य रचित पद्मपुराण प्रसिद्ध रामकथापरक कृतियाँ हैं। स्वयंभू छन्द तथा उनकी काव्यकृतियों का प्रामाण्य उद्धरण तथा उनकी समीक्षा हमें कई सूत्रों से प्राप्त होते हैं। डॉ. हीरालाल जैन ने 'Swayambhu and his two poems in Apabhramsha' (नागपुर विश्वविद्यालय जर्नल, प्रथम अंक, दिसम्बर 1935, पृष्ठ 70-84) में इस बात का खुलासा किया है। प्रो. मधुसूदन चिमनलाल मोदी सम्पादित भारतीय विद्या (वर्ष-1, अंक-3) के अन्तर्गत पृष्ठ 253–294 में पउमचरिउ की प्रथम दो सन्धियाँ दी गई हैं।[5]

स्वयंभू ने अपनी मूल रचना को पाँच प्रधान खंडों में बाँटा है। इन खंडों या कांडों के नाम हैं– विद्याधरकाण्ड, अयोध्याकाण्ड, सुन्दरकाण्ड, युद्धकाण्ड तथा उत्तरकाण्ड। 90 सन्धियों में समाप्त इस कृति की आरम्भिक

---

3. अधिक जानकारी के लिए देखिए– सक्सेना, उपेन्द्र, अपभ्रंश साहित्यः रचना और रचनाकार, पृष्ठ 72 तथा डॉ. रामसिंह तोमर, प्राकृत-अपभ्रंश साहित्य और उसका हिन्दी पर प्रभाव, पृष्ठ 97.
4. अधिक जानकारी के लिए देखें, पाण्डेय, डॉ. कमलशील, स्वयंभू : कवि और काव्य, पृष्ठ 24.
5. Annals of the Institute of Socio-Historical Studies, p. 72

37 सन्धियों की हस्तलिखित प्रति को डॉ. रामसिंह तोमर ने जयपुर से प्राप्त किया था। कृति-परिमाण 12,000 श्लोक के बराबर है।[6]

स्वयंभू की इस प्रख्यात कृति को करीब से देखने पर पता चलता है कि उन्होंने रविषेणाचार्य की रामकथा परम्परा को आधार मानकर चलने की कोशिश की हैं। इस बात को स्वयंभू रामकथा परम्परा वर्णन करते समय उजागर करते हैं–

'पुणु पहवें संसारारांए कित्तिहरेण अणुत्तरवाएं।
पुणु रविसेणायरिय पसाएं बुद्धिए अवगाहिय कइराएं।।'

पउमचरिउ का प्रारम्भ जिस मूलकथा से होता है, वह अन्य जैन कवियों की कृतियों के समान ही है। मगधराज श्रेणिक जिनमुनि से रामकथा-सम्बन्धित प्रचलित भ्रान्तियों का निराकरण कराना चाहते हैं। कवि बड़े काव्यात्मक रूप में इन प्रश्नों को उपस्थापित करते हैं–

'जइ रामहो तिहुअणु उवरें माइ तो रावणु कहिं तिय लेवि जाइ।' 'यदि राम त्रिभुवनोपरि हैं या उनके उदर में त्रिलोक व्याप्त है, तो रावण कैसे उनकी स्त्री को ले गया?'

'किह तियमइ कारणे कविवरेण घाइज्जइ बालि सहोयरेण।'
'स्त्री के कारण सहोदर कपि द्वारा बालि क्यों मारा गया?'

'किह वाणर गिरिवर उव्वहंति वंधेवि मयरहरू समुत्तरंति।
किह रावणु दहमुहु वीसहत्थु अमराहिव भुवबंधण समत्थु।।'

'पर्वतों को उठाकर सेतु बाँधकर बानर कैसे पार हुए? दशमुख और बीस हाथों वाला रावण अमराधिप को बाँधने में समर्थ कैसे हुआ?'

गौतम गणधर द्वारा कथा का प्रारम्भ इन्हीं कुछ 'प्रश्नों के उत्तर' को सम्प्रेषित करते हुए आरम्भ होता है। 'पउमचरिउ' 1 से 3 तक के

6. देखिए समरपाल, डॉ. पुष्पा, अपभ्रंश के कवि स्वयंभू और उनका काव्य, अभिनव प्रकाशन पृष्ठ 201, इसके अलावे पाठालोचन के लिए देखिए– Wilson, Prof. Duncan, 'On the Trans--literation of Verses in Paumcariu', Journal of Asiatic Research, Jan. 1972, p.p. 73-79.

प्रारम्भिक रचनात्मक पड़ावों के अन्तर्गत सृष्टि वर्णन, जम्बूद्वीपीय स्थिति, कुलकरों की उत्पत्ति, कालोल्लेख, ऋषभदेव की अयोध्या में उत्पत्ति एवं उनके जीवन-चरित को सम्प्रेषित किया गया है।[7] इस कथानक–धारा में आगे इक्ष्वाकुवंश, लंका निवासी देवताओं तथा विद्याधरों के वंश का वर्णन दिया गया है।

जैन रामकथा की परम्परा पूर्णतः जैन धारानुसारी है। प्रचलित परिवर्तनों के साथ इनका संरचनात्मक निर्माण हुआ है। मूल पात्र परिकल्पना तथा भावात्मक परिकल्पना में जिनभक्ति झलकती है। 'पउमचरिउ' की अन्यतम प्रमुख विशेषता इसके रचनाकार की आलंकारिक शैली है। श्रेणिक के विषय में वर्णन करते समय स्वयंभू की काव्यात्मकता सहज ही देखी जा सकती है–

'किं तिणयणु णं णं विसमचवलु, किं ससहरू णं णं इक्क पक्ख।'

अर्थात् क्या श्रेणिक त्रिनेत्र शिव हैं! नहीं, नहीं–वे विषमचक्षु हैं! क्या यशधर हैं! नहीं नहीं एक पक्ष है!

डॉ. तोमर ने कृति के पाँच कांडों की सन्धि संख्या का अध्यायपरक तथ्य इस प्रकार दिया है– (क) विद्याधर काण्ड : 1–20 सन्धियाँ (ख) अयोध्या काण्ड : 22 सन्धियाँ (ग) सुन्दरकाण्ड : 14 सन्धियाँ (घ) युद्धकाण्ड : 21 सन्धियाँ (ङ) उत्तर काण्ड : 13 सन्धियाँ।

'पउमचरिउ' की अन्तिम आठ सन्धियों की रचना कवि के पुत्र त्रिभुवन ने लिखकर जोड़ दिया है।

रिट्ठणेमिचरिउं (रिष्टनेमिचरित या अरिष्टनेमिचरित)

इसकी प्राचीन पोथी (जो सं. 1615 के लगभग हस्तलिखित है) को डॉ. रामसिंह तोमर ने पूना के भंडारकर ऑरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट

---

7. 'The base of the tales along with the poetic lines formulate an inherent concept of Jainism in its transmundane realm thereby proving the mettel of the poet.' अधिक जानकारी के लिए देखे– Heinzmann, Jonathan V., Pre-Medieval Indian Literature, p. 320

से प्राप्त किया था। अधिक प्राचीन व शुद्ध प्रति उन्हें जयपुर के आमेर भंडार में मिली थी।

रिट्ठणेमिचरिउ को स्वयंभू ने 'हरिवंश' नाम से ही सम्बोधित किया है। सन्धि में 'हरिवंश महन्नउ के तरम्मि' तथा 'पारंभिय पुणु हरिवंश कहा' आदि कथन इसी बात के द्योतक हैं। नेमिनाथ की वन्दना से कृति प्रारम्भ होती है। कवि की चिन्ता हरिवंश रूपी महा-अर्णव (हरिवंश महन्नउ) में पैठने की तथाकथित अक्षमता रा है। माता सरस्वती का आकर कवि को धैर्य बँधाना और हतोत्साहित कवि का समुत्साहित होकर काव्य-रचना में प्रवृत्त होना और हरिवंश रचना का सम्पन्न होना कवि ने सुललित अपभ्रंश के द्वारा सम्प्रेषितं किया है।

चिंतवइ सयंभु काइ करमि, हरिवंस महन्नउ के तरम्मि।
गुरुवयण तरंडउ लद्धु न वि जम्महो वि ण जोइउ को वि कवि।
णउ णाइउ वाहत्तरि कलउ एकु वि ण गंधु भोवकलउ।
तहि अवसरि सरसइ धीरवइ करि कव्वु दिणमइ विमलमइ।

स्वयंभू यह सोचते हैं कि हरिवंश रूपी महासागर को कौन पार कर सकता है? उनके भीतर यह आत्मिक अप्राप्तिजनित क्षोभ उत्पन्न होता है कि (उन्हें) गुरुबंधन, गुरोपदेश रूपी नौका नहीं प्राप्त हुई, न तो उन्होंने जन्म से ही किसी कवि को देखा (अर्थात् कवि-सान्निध्य प्राप्त किया)। बहत्तर प्रकार की कलाओं का ज्ञान उन्हें नहीं मिला। साथ ही, वे स्वाध्यायहीन रहे। उन्होंने एक भी ग्रन्थ नहीं देखा (अर्थात् अध्ययन नहीं किया)। सरस्वती ने धैर्य बँधाते हुए कहा– 'ऐ दिनमति विमलमति! काव्य (की रचना) करो! इसी के साथ कवि ने दैवी आश्वासन के उपरांत हरिवंश कथा का लेखन प्रारम्भ किया।'

'पउमचरिउ' तथा 'हरिवंशपुराण' में कथानक से जुड़ी जो समानता पाई जाती है वहाँ हम पाते हैं कि महाराज श्रेणिक ने गौतम

गणधर से महाभारत की कथा सम्बन्धित अनेकों शंकाएँ प्रकट की हैं। पउमचरिउ में भी गौतम गणधर के प्रति, महाभारत कथा समान, रामचरित के विभिन्न प्रसंगों पर संशयपूर्ण सवाल उठाए गए हैं। कडवकों की दृष्टि से पउमचरिउ में 1269 कडवक हैं और हरिवंशपुराण में 1937 कडवक हैं। रिट्ठणेमिचरिउ या हरिवंशपुराण में प्रथम तेरह सन्धियों के अन्तर्गत कृष्ण का जन्म, बाल्यकालीन लीलाएँ, विवाह तथा प्रद्युम्न आदि की कथाओं का समाहार हैं। साथ ही नेमिनाथ की जन्म कथा का प्रसंग भी यहाँ द्रष्टव्य है।

'पउमचरिउ' की तरह 'रिट्ठणेमिचरिउ' को भी स्वयंभू ने काण्डों में विभक्त किया है। यादवकाण्ड में 13 सन्धियाँ, कुरूकाण्ड में 19 सन्धियाँ और युद्धकाण्ड में 60 सन्धियाँ हैं। उपरोक्त कथा भाग (कृष्ण जन्म से नेमि जन्म-कथा पर्यन्त) यादवकाण्ड के अन्तर्गत आता है। नारद के चरित्र को यहाँ कलहप्रिय साधु के रूप में पाया जाता है। ये नारद ही हैं जो कृष्ण के अनेक विवाहों की तैयारी कराते हैं। इसके अलावे शेष समस्त कृति में महाभारत और हरिवंश के आधार पर कथा मिलती है। जहाँ तक काण्डों का सवाल है, तो कुरुकाण्ड में कौरव-पाण्डवों के जन्म, विद्या तथा प्रशिक्षण के साथ-साथ बाल्यकाल का भी वर्णन है। इसमें पारस्परिक वैमनस्य, युधिष्ठिर द्वारा द्युतक्रीड़ा में सबकुछ हार जाना तथा पाण्डवों द्वारा द्वादश वर्ष बनवास का उल्लेख किया गया है। युद्धकाण्ड के अन्तर्गत कौरव तथा पाण्डवों के भीषण युद्ध में कौरव-पराभव का उल्लेख किया गया है।

डॉ. रामसिंह तोमर ने अपने ग्रन्थ में हरिवंशपुराण के प्रसंग में नवीन प्रसंगों का उल्लेख किया है। कथानक में कनक तांत्रिक का प्रवेश भी इसी प्रकार का एक प्रसंग है। उन्होंने 28 संख्यक सन्धि का वर्णन किया है, जहाँ दुर्योधन को प्रसन्न करने के लिए कनक कृत्या को सिद्ध करता है किन्तु कृत्या उसे ही नष्ट कर देती है।[8]

वर्णनात्मकता (Descriptive Thematic Format) हरिवंशपुराण की अन्यतम प्रमुख विशेषता है। युद्ध वर्णन की शैली एक ही है पर उसके कथन वैविध्यपूर्ण हैं। धार्मिक प्रसंग, जैसे 34 संख्यक सन्धि में दुर्योधन को समझाते समय इसका उल्लेख हम देख पाते हैं।

कवि के मन में जो भाव अभिव्यंजित हुए हैं, उसका सम्प्रेषण काव्यात्मक काल्पनिकता के असाधारण चित्र को प्रस्तुत करता है। युधिष्ठिर के बनवासी स्वरूप में ही कवि अपने कल्पना के जाल से एक असाधारण शब्दबिम्ब को उभारता है–

कवि कहते हैं, राजा युधिष्ठिर (यद्यपि बनवासी) अपने राज्यश्री को जैसे आरण्यक परिवेश में अनुभव करते हैं। स्वाधीन गज तुरंगों के समूह हैं और सिंहासनासीन राजा के सेवकरूपी भाई हैं। चमरी गौयें अनुपम चामर-धारण किए हुए हैं, जो लता रूपी गृहों से निकली हुई हैं। निरूपम फलों (का) भक्षण करते हैं तथा अमृतोपम जल का पान करते हैं। ऐसे अनेक पर्वत या महीधर हैं, जिनकी अप्रमाण रत्नराशि उनका भण्डार हैं। आसपास के वृक्ष रविकिरणों का निवारण कर रहे हैं। स्वनिर्मित पुष्प, वन को सुगंधित किए हुए हैं। यहाँ वरकेशर से धूसरित पथ ही राजपथ है।[9]

आलोच्य कृति में स्वयंभू ने भावों का भी सरस चित्रण किया है। भाषिकी स्तर पर स्वयंभू परिनिष्ठित साहित्यिक अपभ्रंश का प्रयोग करते हैं। डॉ. तोमर ध्वन्यात्मक तथा अनुरणनात्मक शब्द-प्रयोगों की

---

8. तोमर, डॉ. रामसिंह, प्राकृत-अपभ्रंश साहित्य और उसका हिन्दी साहित्य पर प्रभाव, पृष्ठ 101.
9. साहीण महागयतुरयथट्ठ मायरकिंकर अखलिय पट्ट।
   अपमेयइं चमरीचामराइं णिग्गलइं णिवायइं लयहटाइं।
   खज्जंति फलइं णिरुणिरुवमाइं पिज्जंति जलइं अभिओवमाइं।
   अपमाण महामणिमहिहरेहिं रवि किरण णिवारिय तरुबरेहिं।
   वण सइहिमि णिम्मिय फुल्लगव वरकेसरधूसररायपंथ।

बात करते हैं। उन्होंने इसके समर्थन में 'देद्दे जो जंतहो देद्दे गमइ सर' (21·7) जैसे पद का उदाहरण सामने रखा है।[10] कम प्रचलित शब्द प्रयोग की तरफ भी उन्होंने हमारा ध्यान बँटाया है। स्वयंभू का प्रिय छन्द पज्झटिका या पद्धड़िया है। उन्होंने स्वयं ही लिखा है– 'छंदडिय दुवइ धुवएहि जडिय। चउमुहेण समप्पिय पद्धडिय' (सन्धि 1)।[11] जिन अन्य छन्दों का उन्होंने प्रयोग किया है उनमें भुजंगप्रयात, कामिनीमोहन (रिट्ठणेमिचरिउ, 26·4), नाराचक (रिट्ठणेमिचरिउ, 29·7), द्विपदी, हेला, धत्ता आदि के प्रयोग देखे जा सकते हैं। छंदशास्त्र के कृतिकार होने के नाते, स्वयंभू का छन्दप्रयोग निर्दोष तथा कलाभिव्यंजक दोनों विशेषताओं से सम्पन्न रहा है।

काव्य सृजन आत्मिक भावाभिव्यंजक ही नहीं, बल्कि परिचयज्ञापक भी हुआ करता है। स्वयंभू भी इस वैशिष्ट्य के अपवाद नहीं हैं। 'पउमचरिउ' के प्रारम्भ में चतुर्मुख, दन्ती और भद्र के काव्य कौशल की प्रशंसा स्वयंभू ने की है। उन्हीं के समान स्वयंभू की प्रतिभा को बताया गया है। पउमचरिउ के द्वारा स्वयंभू ने अपने बिम्बात्मक स्वरूप को उभारा है। वे लिखते हैं–

पउमिणि जणणि गब्भसंभूएं मारूयएव-रूव-अणुराएं।
अइतणुएण पइहरगत्ते छिव्वर जासें पविरल दन्ते।।[12]

कवि अपने सम्बन्ध में कहते हैं कि वे मारूत और पद्मिनी के पुत्र थे, उनकी काया स्थूल थी तथा वे चौड़ी नाकवाले और विरल दन्तयुक्त थे। कवि त्रिभुवन ने भी 'मारुयसुय-सिरि वइराय-तणय-कय-पोमचरिय-

---

10. तोमर, डॉ. रामसिंह तोमर, प्राकृत अपभ्रंश साहित्य तथा उसका हिन्दी साहित्य पर प्रभाव। पृष्ठ 102.
11. देखिए त्रिपाठी, डॉ. शशिकान्त, प्राचीन हिन्दी काव्य में छन्दप्रयोग, पृष्ठ 62.
12. पउमचरिउ 1·3; इसके अलावे देखिए सिंह, डॉ. मधुसूदन, स्वयंभू : एक अध्ययन, कमल बुक सेन्टर, पृष्ठ 98-99.

अवसेसं' पंक्ति में इस तथ्य की पुष्टि की है। वैयक्तिक उल्लेखों में कुछ एक स्थल ऐसे हैं, जहाँ स्वयंभू ने अपनी पत्नी का जिक्र किया है। कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

'धुवरायवत इयलु अप्पणत्ति सुयाणुपाढेण। णामेण सामियब्बा सयंभु धरिणी महासत्ता। तीए लिहावियमिणं वीसहिं, आसासएहिं पडिबद्धं। सिरि विज्जाहर कंडं कंडंपिव कामएवस्स।' (पउमचरिउ सन्धि 20 का अन्त) तथा–

'आइच्चुएवि पडिमोवमाए आइच्चंवियाए। बीयउ उज्झाकंडं सयंभु धरिणीए लेहवियं' (पउमचरिउ, सन्धि 42)

उल्लेखों से प्रतीत होता है कि स्वयंभू के अयोध्या कांड के निर्माण में कविपत्नी ने सहायता प्रदान की थी। उनका नाम आदित्य देती है, यह तो स्पष्ट है–परन्तु उपरोक्त दोनों उल्लेखों से यह स्पष्ट है कि सम्भवतः उनके दो नाम रहे होंगे। स्वयंभू के कनिष्ठ पुत्र त्रिभुवन थे और कवि की अपूर्ण कृतियों को त्रिभुवन ने ही पूर्ण किया। यहाँ भी एक दुविधा है। सामान्य उल्लेखों से यह धारणा तैयार होती है कि त्रिभुवन स्वयंभू के छोटे बेटे थे। पुनः कुछ उल्लेख ऐसे मिलते हैं, जिन्हें पढ़ने से प्रतीत होता है कि वे कदाचित् कवि के एकमात्र पुत्र थे। जैसे–

'वंदइआसिय-महकइ-सयंभू लहु-अंगजाय विणिबद्धो।'

तथा **'तिहुयण-सयंभु पवरं एक्को कइराय-चक्किणुप्पण्णो।'**[13]

जहाँ तक अपूर्ण कृतियों के पूर्ण करने का सवाल है, तो यह देखा जा सकता है कि पउमचरिउ की अन्तिम आठ सन्धियाँ (संख्या 83-90) और हरिवंशपुराण में 99 से 108 तक की सन्धियाँ त्रिभुवन रचित हैं, यह उनकी पुष्पिकाओं से हम जान पाते हैं। यहाँ प्रसंगवश यह सूत्र प्रदान

---

13. देखिए, Mavalankar, Keshavao Govindrao, Some Aspects of Ancient Literature on the Perspectives of Poetics, J. I. S. D. no. 14, p.56. इसके अलावे देखें–घिल्डियाल, प्रो. आनन्द सदाशिव; प्राकृत तथा अपभ्रंश की काव्य-परम्परा, पृष्ठ 123.

करना विषयांतर नहीं होगा कि हरिवंश की अन्तिम चार सन्धियाँ (109-112) यशकीर्ति रचित हैं तथा 19वें सन्धि की पुष्पिका में धवल का भी नाम मिलता है। संभवतः यह उन्हीं की रचना हो।[14]

जिन आश्रयदाताओं के पास रहकर स्वयंभू ने काव्य रचना की थी, उनका नामोल्लेख उन्होंने किया है। कवि ने पउमचरिउ की रचना धनंजय के आश्रय में रहकर तथा हरिवंश की रचना धवल के आश्रय में रहकर की थी। कवि ने इनका नामोल्लेख करते समय चूँकि किसी विशेषण का उल्लेख नहीं किया है, अतः सम्भाव्य है कि ये राजन्यवर्ग से सम्पृक्त न होकर तथाकथित श्रेष्ठी रहे होंगे। ऐतिहासिक सूत्रों से हमारे पास इनकी कोई जानकारी नहीं मिलती। स्वयंभू-पुत्र त्रिभुवन के आश्रयदाता 'वंदइय' थे। इनका भी कोई ऐतिहासिक परिचय नहीं मिलता। जहाँ तक त्रिभुवन का सवाल है, उनकी कोई स्वतन्त्र कृति नहीं मिलती। "त्रिभुवन का मुख्य प्रदेय, पिता के असमाप्त अंशों को समाप्त करने में रहा है। अपने पिता स्वयंभू की कृतियों के असमाप्त अंशों को अपनी कवित्वशक्ति के बल पर उन्होंने एक हद तक पूर्णता प्रदान की। स्वयंभू की एक अनुपलब्ध कृति के रूप में 'पंचमीचरिउ' का उल्लेख विद्वानों ने बार-बार किया है। त्रिभुवन ने 'पंचमीचरिउ' में अपना काव्यात्मक योगदान दिया है।"[15]

इस संदर्भ में त्रिभुवन द्वारा रचित अंश कौन से हैं इस पर आलोकपात किया जाना चाहिए। पउमचरिउ की अन्तिम आठ सन्धियाँ तथा हरिवंश की नौ सन्धियाँ त्रिभुवन रचित हैं जिसका उल्लेख हम पहले कर चुके हैं। प्रसंगवश यशकीर्ति तथा धवल जैसे कवियों का नाम

---

14. देखिए, Sharma, Dr. P.N., Harivamsa of Swayambhu : A Critical Approach, Jeevandeep Publication, 1979, p.29 तथा प्राकृत तथा अपभ्रंश की काव्य परम्परा, पृष्ठ 163.

15. त्रिभुवन सम्बन्धी अधिक जानकारी के लिए देखिए, जैन, डॉ. अनीता, अपभ्रंश साहित्य के लुप्तप्राय कवि, शोध-दिशा (त्रैमासिक), अंक 5, 1992 सम्पादक--डॉ. चन्द्रप्रकाश दीक्षित, बलरामपुर, पृष्ठ 61.

भी हरिवंश रचना के अन्तर्गत पाया जाता है। अतः सम्भव है, वह उनकी रचना हो।[16] स्वयंभू के समयकाल की सीमाएँ उनकी रचनाओं से निर्धारित की जा सकती हैं। व्यास के साथ स्वयंभू ने भामह, दण्डी, बाण तथा श्रीहर्ष का भी स्मरण किया है। जैसे–

'इंदेण समप्पिउ वायरणु, रसु भरहें वासे वित्थरणु।
पिगंलेण छंद पय पत्थारु। भम्महं दंडिणिहिं अलंकारू।
वाणेण समप्पिउ घणघणउं। तं अक्खरंडवरु अप्पणउ।'[17]

अपभ्रंश के कवियों में पुष्पदन्त और हरिषेण, दोनों ने बड़े आदरपूर्वक स्वयंभू का उल्लेख किया है। पुष्पदन्त का समयकाल दसवीं शताब्दी का है तथा हरिषेण ने 'धर्म परीक्षा' की रचना 1040 विक्रमाब्द में सम्पन्न की। इस प्रकार से श्रीहर्ष (नागानन्द-रचयिता) तथा पुष्पदन्त के बीच के समयकाल में स्वयंभू जीवित थे। पुष्पदन्त के समय से उनका काल लगभग एक शती पूर्व अवश्य होना चाहिए और इस प्रकार 800 और 900 ई. के मध्यकालीन समयकाल में स्वयंभू वर्तमान रहे होंगे।[18]

पुष्पदंत :- अपभ्रंश प्रबन्ध-काव्य रचयिताओं में पुष्पदन्त का नाम स्वयंभू के बाद ही लिया जाता रहा है। महापुराण, णायकुमारचरिउ (नागकुमारचरित) और जसहरचरिउ (यशोधर चरित) उनकी तीन प्रमुख कृतियाँ हैं। यहाँ हम एक-एक कर विभिन्न रचनाओं का परिचय देंगे।

---

16. वहीं पृष्ठ 65-66 तथा Thakur, Prof. Manohar, 'Aspects of Apabhramsa : A Study in Poetics', 1981, पृष्ठ 252-263.
17. देखिए हरिवंश 1.2 तथा Mcneill, Prof. T.H., The Ancient Literary Ethics : Cases and Criticism on Apabhramsa and Prakrita, Journal of South Asian Literature (May-July), 1998 p. 52.
18. देखिए, शर्मा, ज्ञानानन्द, कवि पुष्पदन्त : व्यक्तित्व एवं कृतित्व (अप्रकाशित शोध-प्रबन्ध, 1976) तथा Mcneill, Prof. T.H., The Ancient Literary Ethics : Cases and Criticism on Apabhramsa and Prakrita, Journal of South Asian Literature (May-July), 1998 p. 55.

महापुराण या तिसट्ठिमहापुरिस गुणालंकार :-

महापुराण दिगम्बर जैन परम्परा से सम्पृक्त रहा हैं। जैन धारा के अन्तर्गत तिरसठ (63) महापुरुष (शलाकापुरुष) माने गए हैं। पुष्पदन्त ने अपने महापुराण काव्य में चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ वासुदेव, नौ बलदेव तथा नौ प्रतिवासुदेवों की कथा को प्रस्तुत किया है। यहाँ प्रसंगवश उनसे शीलांक के रचनात्मक विषयगत पार्थक्य को समझा जा सकता है। शीलांक आदि ने 9 बलदेवों की गणना महापुरुषों में नहीं की। महापुराण एक वृहत्कलेवर ग्रन्थ है। इसके प्रथम भाग में आदिपुराण की 37 सन्धियों में प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव तथा प्रथम चक्रवर्ती भरत की कथा है। रचनात्मक धारा का प्रवाह कुछ इस प्रकार है।–

भूमिका पर्व में कृति के प्रारम्भ में जिन वंदना, दुर्जन एवं सज्जनों का स्मरण किया गया है। अपने आश्रयदाता भरत के आग्रह से पुष्पदन्त ने काव्य-रचना प्रारम्भ की। महाराज श्रेणिक (बिंबिसार) की जिज्ञासा तथा प्रश्न के फलस्वरूप वर्धमान महावीर के परमशिष्य गणधर गौतमस्वामी उन्हें पुराण-कथा कहते हैं। ऋषभ-चरित्र के वर्णन के द्वारा-अयोध्या में उनके जन्म, मानव समाज को असि, मसि तथा कृषि की सैद्धान्तिक तथा प्रायोगिक प्रशिक्षण-विधि सम्प्रेषित करना, त्याग, तपस्या तथा अन्त में कल्याण व परम आत्मोपलब्धि-प्राप्ति का वर्णन है। समस्त वर्णन काव्यात्मक प्रतिभा के भव्य वर्णन के आधार पर पुष्पदन्त द्वारा विरचित है। विद्वानों का मानना है–

"One does not find a haste in the infrastructural formulation of Mahapurana, as it coincides with creative fantasy, poetics and consoling humanity enmasse.[19]"

सन्धि संख्या 38 से 68 (कुल 31 सन्धियों) तक अजितनाथ आदि तीर्थंकरों की कथाएँ हैं। यह पूरा अंश कथात्मक है। 69 से 79

19. Folkert, Dr. Kendall, Selected Papers on Jainism p. 199.

तक की सन्धियों में आठवें बलदेव, वासुदेव, प्रतिवासुदेव राम, लक्ष्मण और रावण की कथा है। राम के जन्मान्तरीण स्वरूपों का वर्णन यहाँ कवि ने किया है। महापुराण की जैन कथा के अनुसार, सीता विद्याधर रावण और उसकी पत्नी मंदोदरी की पुत्री थी। राम और लक्ष्मण एकाधिक विवाह करते हैं। वाराणसी से रावण द्वारा सीता का अपहरण हो जाता है। यह उस समय होता है जब उनका राम से विवाह हो चुका था और सीता क्रीड़ारत थी। वानररूपी विद्याधरों की सहायता से राम रावण पर चढ़ाई करते हैं। प्रचण्ड युद्ध के फलस्वरूप लक्ष्मण के हाथों से रावण की मृत्यु होती है। राम प्रत्यावर्तन करते हैं और अपना राज्य सँभालते हैं। लक्ष्मण की हिंसा बरकरार रहती है। राम प्रत्यावर्तन करते हैं और अपना राज्य सँभालते हैं। लक्ष्मण की हिंसा बरकरार रहती है। कालांतर में ये मृत्यु को प्राप्त कर नरकगामी होते हैं। राम और लक्ष्मण की धारा में विरोधाभास महापुराण में परिलक्षित होते हैं। जहाँ महापुराण में लक्ष्मण नरकगामी होते हैं, वहीं राम जिन भक्ति के प्रताप के फलस्वरूप केवलज्ञान प्राप्तकर मोक्षप्राप्त करते हैं। कालांतर में लक्ष्मण भी, शिवपद प्राप्त करते हैं।[20]

महापुराण के समस्त कथा के मध्य 'नमिनाथ की कथा' (सन्धि 80) आती है। उसके बाद तीर्थंकर नेमिनाथ तथा नवम बलदेव तथा वासुदेव श्रीकृष्ण और बलराम की कथा है। कुछ एक स्थान बड़े रोचक तथा महत्त्वपूर्ण हैं। कौरव, पाण्डव तथा यादवों का वर्णन करते समय व्यास को 'अलीक कवि' कहकर अभिहित किया गया है। इस बात को दिखाया गया है कि कंस और उग्रसेन पूर्वजन्म की पारस्परिक बैर के चलते, इस जन्म में शत्रुता से सम्पृक्त रहे। कृष्ण के लीलाओं का, विशेषतः बाललीला का अत्यन्त आकर्षक वर्णन किया है। महापुराण में कृष्ण-चरित्र को काव्य का उत्कृष्टतम अंश माना जा सकता है। कथानक में कृष्ण अन्त में विरक्त होकर तपस्यारत होते हैं, तथा एक

20. Mathew, Cyril, Myths and Personalities in Indian Epics, Jonathon and Duncan, 1966, p. 178.

भील के बाण से मारे जाते हैं। शिव तथा सती के दक्षयज्ञ वाले आख्यानकों में जो चित्रण हमारे सामने उभरकर आता है उसके साथ महापुराण का आख्यान विशेष तौर पर उल्लेखनीय है। बलदेव कृष्ण के शरीर को नहला-धुलाकर वस्त्रों से सुसज्जित कर कंधे पर रखकर छः महीने तक उन्मत्त की तरह भ्रमण करते हैं। फिर जब विह्वलता से यथार्थ का आभास होता है, तब वे कृष्ण का यथोचित पार्थिव स्तर पर दाह-संस्कार करते हैं। हिंसारत रहने के लिए वासुदेव कृष्ण की आत्मा को कुछ दिन नरक जाना पड़ता है। बलदेव स्वर्ग प्राप्त करते हैं। पाण्डवों में कृष्ण के देहावसान के कारण गहन शोक का परिवेश व्याप्त हो जाता है। पाण्डव तपस्या करते हुए सद्गति प्राप्त करते हैं।[21]

महापुराण की अन्तिम सन्धियों में पार्श्वनाथ, महावीर, जंबूस्वामी एवं प्रीतिंकर के कथानक हैं। महापुराण का सबसे बड़ा वैशिष्ट्य है कि सारे दिग्विजयी मनुज रूपी महापुरुषों की कथा अपने आप में पूर्णता को दर्शाता है। पुष्पदन्त अपनी इस कृति के प्रति एक विशेष दृष्टि रखते हैं तथा अपने महापुराण को 'महापुरिसगुणालंकार' एवं 'महाकाव्य'- इन दोनों विशेषणों से सज्जित करते हैं। सन्धियों की पुष्पिकाओं में यह प्रमाण मिलता है, जहाँ वे लिखते हैं– **'इय महापुराणे तिसट्ठिमहापुरिस गुणालंकारे महाकइ पुप्फयंतविरइए महाभव्व भरहाणुमण्णिए महाकाव्ये.......'**।[22]

पुष्पदन्त की काव्यप्रतिभा का प्रमाण उनका सांगोपांग जीवन-उन्मुखी भावाभिव्यंजना के द्वारा सम्प्रेषित हुआ है। जीवन का कदाचित् हो ऐसा कोई पक्ष है जिसे पुष्पदन्त ने स्पर्श न किया हो। उन्होंने सभी

---

21. देखिए, तोमर, डॉ. रामसिंह, प्राकृत-अपभ्रंश साहित्य और उसका हिन्दी साहित्य पर प्रभाव, पृष्ठ 105-106। इसके अलावे देखें, सिंह, पुष्पलता, रामायण-महाभारत की मिथकीय समीक्षाः बोध और बदलाव, ज्ञान प्रकाशन, अलीगढ़, पृष्ठ 19
22. महापुराण, सम्पादन, डॉ. पी. एल. वैद्य, माणिक्यचंद्र दिगम्बर जैन ग्रन्थमाला (1993 विक्रमाब्द) बम्बई, पृष्ठ 12

आयामों पर विशद रूप से प्रकाश डालते हुए जीवन की सरस अभिव्यक्ति को काव्यात्मकता के द्वारा बार-बार उभारा है। चाहे परम्परागत कथा हो या शास्त्रीयता, हर प्रसंग को कवित्त के द्वारा उन्होंने मनोरम बनाया है।

पुष्पदन्त के काव्यात्मक स्वरूप का एक और असाधारण उदाहरण उनके शब्दबिम्ब हैं। साथ ही किसी अंचलविशेष का वर्णन करते समय वे मुक्त रूप से वहाँ के प्रधान स्थान, नगर, प्रदेश, वन प्रान्तों का बखान करते हैं। पुष्पदन्त की तन्मयता प्रकृति-वर्णन में असामान्य हो उठी है। साहित्यिक कल्पना-वैभव के साथ-साथ ग्राम्य सरलता का पारस्परिक मेल पुष्पदन्त की कविता को असामान्य सौन्दर्य प्रदान करता है। यहाँ मगधदेश के वर्णन से कुछ आवश्यक पंक्तियाँ दी जा रही है–

'सीमारामासामहिं, पविउलगामहिं गज्जंतहिं धवलोहहिं।
सोहइ हलहरसत्थहिं दाण समत्थहिं, णिच्चंचियणिल्लोहहिं।।
अंकुरियइं णवपल्लवघणाइं कुसुमियफलियइं णंदिणवणाइं।
जहिं कोइलु हिंडह कसणपिंडु वणलच्छिहे णं कज्जलकरंडु।

. . . .

जहिं उच्छुवणइं रस गब्भिणाइं णावइ कव्वइं सुकइहि तणाइं
जुज्झंत महिसवसहुच्छवाइं मंथामंथियमंथणि रवाइं।
चवलुद्ध पुच्छ वच्छाउलाइं कीलिय गोवालइं गोउलाइं' ।1.12

कवि कह रहे हैं– '(वह) मगधदेश, सीमास्थित हरित उपवनों, ग्रामों और गर्जना करते हुए वृषभ समूहों तथा दान-समर्थ निर्लोभ व्यक्तियों एवं हल से युक्त कृषकों से शोभित हैं। नवांकुरित सघन पल्लवों से पुष्पित तथा फलयुक्त नंदन वन हैं, जहाँ कृष्णवर्णा कोयलें (इस प्रकार) भ्रमणरत हैं, (मानो) वनलक्ष्मी के काजल हों; (जहाँ) रसगर्भित ईख के वन हैं (ऐसे, जैसे) सुकवि के सरण काव्य का विस्तार हों। उमंग भरे महिष और वृषभ जहाँ लड़ रहे हैं, कोलाहल (रव) करती

गोपबालिकाएँ जहाँ दही मथ रही हैं....साथ ही चपल पूँछों को उठाए हुए बछड़ें गोकुलों में क्रीड़ारत हैं।'[23]

महापुराण में प्रकृति वर्णन की इस अपार छटा को देखकर प्रो. फ्लैहर्टी लिखते हैं–

"Puspadanta's descriptive verdure and variance regarding the vibrant beauty of Indian nature as depicted in Mahapurana is something very unique in character. Seldom do we find such descriptive poetry, on nature in ancient Indian poetry, apart from Sanskrit poetics. Mahapurana has splendidly depicted the change of seasons (Sandhis 12·1, 70·14-15, 85·15-16 describing Autumn, Spring and Rainy seasons), of famous Indian rivers (e.g. Sindhu, Ganga and Yamuna in Sandhis 13·9, 12·8, 95·2 and 29·7-8 respectively), of Ocean (Sandhi 12·13-15) of cowherd maiden (Sandhi 12.11), of animals (Sandhi 12·12). and likewise. The descriptive focus on nature is thereby glistened by Puspadanta's matured handling of the nature as a main subject in his poetry."[24]

(क्रमशः)

---

23. देखिए जैन, डॉ. अंशुमान, अपभ्रंश काव्य में प्रकृति-चित्रण में 'पुष्पदन्त : प्रकृति का चितेरा' शीर्षक अंश, 1983, पृष्ठ 25-38 तथा डॉ वेदव्रत त्रिपाठी 'अनुज' का यह कथन–
"हिन्दी जैन प्रबन्ध काव्य रचयिताओं में प्रकृति के अनन्य प्रेमी तथा परिपार्श्व के बिम्ब प्रस्तोता के रूप में पुष्पदन्त का स्थान अपभ्रंश या हिन्दी है नहीं, भारतीय साहित्य में अनन्य है।" विस्तृत जानकारी के लिए देखिए–प्राचीन हिन्दी काव्य : प्रकृति और प्रयोग, पृष्ठ 167.

24. Prof. Flaherty, Douglas D., "On the Perceptions of Nature in Literature as and accordingly through "Ardhamagadhi", Journal of South East Asian Cultural Studies, p. 184-88

कुवलय माला

श्री केवल मुनि

वज्रगुप्त :

यह घोषणा उसने तीन बार दोहराई किन्तु कोई न आया। केवल हवा साँय-साँय करती रही, किसी ने उत्तर न दिया।

निराश होकर बोला–

यदि मेरी प्रतिज्ञा पूर्ण न हुई तो मैं अग्नि में जलकर प्राण त्याग दूँगा।

एक ओर से आवाज आई–

राजपुत्र! प्रतिज्ञा सत्त्वशालियों की पूरी हुआ करती है।

तुरन्त राजपुत्र ने उत्तर दिया–

तुम कौन हो? सामने आओ और मेरी परीक्षा लो। तभी निर्णय करना कि मैं सत्त्वशाली हूँ या नहीं।

एकाएक कज्जल के समान काली विशालकाय मानव आकृति आ खड़ी हुई कुमार वज्रगुप्त के सामने। उसका रूप बहुत भयंकर था- बाहर निकले बड़े-बड़े दाँत, लपलपाती हुई लाल जिह्वा मानो यमराज की पताका ही हो; भयानक दाढ़े जैसे यमराज का शस्त्रागार, विकराल अट्टहास। दिशाएँ गूँज गई, वायु भी स्तब्ध हो गई जैसे पवन का साँस ही रुक गया हो। वज्रगुप्त इस स्थिति में भी वज्र की भाँति कठोर, अडिग बना रहा। कानों के परदे फाड़ने वाली वेताल की आवाज गूँजी-

परीक्षा देगा, मानव!

अवश्य! मैं तैयार हूँ, तुम कहो। साहसपूर्ण उत्तर दिया वज्रगुप्त ने।

हुम् की आवाज के साथ वेताल बोला–

तुम अग्नि प्रवेश की घोषणा कर रहे थे?

हाँ!

तो चिता बनाओ और उसमें कूद पड़ो, मैं तुम्हारा मांस भक्षण करूँगा, गर्म-गर्म रक्त पीऊंगा–कितना स्वादिष्ट होता है, मानव मांस!

कुछ क्षण रुककर वेताल फिर बोला–

कर सकोगे, इतना साहस? है इतना सत्त्व तुम में?

साहस कहने से प्रगट नहीं होता, कर दिखाने से होता है वेताल! तुम कुछ क्षण प्रतीक्षा करो।

यह कहकर कुमार वज्रगुप्त ने सुखी लकड़ियाँ एकत्र कर चिता बनाई, उसमें चिनगारी लगा दी। अग्नि की लपटें उठने लगी। वज्रगुप्त उसमें कूदने को उद्यत हुआ। किन्तु उसी क्षण चमत्कार सा हुआ। वह वहीं स्तंभित हो गया। वेताल ने सौम्य रूप धारण किया और बोला–

तुम्हारे साहस से मैं सन्तुष्ट हूँ। यह तो मात्र तुम्हारे सत्त्व की परीक्षा थी।[1] हम व्यंतर जाति के देव न मांस खाते हैं और न मदिरा पीते हैं। लौकिक धारणा मिथ्या है। अब तुम अपनी प्रतिज्ञा बताओ। मैं तुम्हारी यथाशक्ति सहायता करूँगा।

वज्रगुप्त ने अपनी प्रतिज्ञा बताई–

कोई चोर हमारी नगरी में चोरी करता है। जन-जीवन त्रस्त कर रखा है, उसने। राज-कर्मचारी उसे पकड़ नहीं पाये। तब मैंने सात

---

1. यहाँ मूल कुवलयमाला प्राकृत ग्रन्थ में कुमार वज्रगुप्त द्वारा अपना मांस काटकर खिलाने और रक्त पिलाने का वर्णन है। वहीं तत्काल गणधर गौतम प्रश्न करते हैं–भंते! क्या वेताल आदि व्यंतर मांस और मदिरा का सेवन करते हैं? भगवान उत्तर देते हैं–नहीं गौतम! वाण-व्यंतर मांस-मदिरा का सेवन नहीं करते। ये वाणव्यंतर बालकों के समान कौतुक प्रिय होते हैं। ऐसा भ्रम होता है कि वे मांस-मदिरा का सेवन कर रहे हैं, जबकि वास्तविकता यह नहीं होती।

दिन के अन्दर नगर निवासियों को भय-मुक्त करने की प्रतिज्ञा की। छह दिन से उसे तलाश कर रहा हूँ, वह कहीं न मिला। आज सातवीं रात है। जब मेरी बुद्धि और शक्ति विफल हो गई तब मैंने आपका आह्वान किया। यदि आज रात ही मैं अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण न कर सका तो प्रातः सूर्योदय के समय ही चिता में जल कर प्राण दे दूँगा।

तो अब तुम मुझसे क्या सहायता चाहते हो? उस चोर को पकड़ लाऊँ? वेताल ने पूछा।

नहीं वेताल! सिर्फ तुम मुझे उसका पता दो, फिर तो मैं निपट लूँगा।

वह विद्यासिद्ध है, साहसी मानव।

किन्तु वह पापी भी तो है और पापी की विद्याएँ भी शक्तिहीन हो जाती हैं। उसका चौर कर्म ही उसका काल बन जायेगा।

तुम्हारा कथन सत्य है, साहसी कुमार! शक्ति पाकर सदा ही उसका सदुपयोग करना चाहिए, कभी दुरुपयोग नहीं। मैं उसका पता बताये देता हूँ।

यह कहकर वेताल ने चोर का पता बताया–

श्मशान के समीप ही जो विशालकाय वटवृक्ष है, उसके कोटर में ही उसका प्रवेश द्वार है।

वज्रगुप्त को इतनी ही जानकारी की आवश्यकता थी। उसने वेताल के प्रति कृतज्ञता प्रगट की और वटवृक्ष की ओर चल दिया। वेताल भी अंतर्धान हो गया।

वटवृक्ष के समीप पहुँचकर वज्रगुप्त ने कोटर ढूँढ़ निकाला। पत्तों आदि को हटाया तो अन्दर से अगर कपूर आदि की सुगन्ध आने लगी। वह समझ गया कि इसी में चोर का निवास है। हाथ में नंगी तलवार ले उस कोटर में प्रवेश कर गया।

भूमितल में जाकर देखा तो चकित रह गया। उसे स्वप्न में भी आशा न थी कि भूगर्भ में इतना सुन्दर और विशाल महल होगा। वह महल की शोभा देखने लगा। महल में अनेक खिड़कियाँ और वेदिकाएँ थी।

महल के अन्दर प्रवेश किया तो और भी आश्चर्य हुआ। आँगन स्फटिक मणि का था, दीवारों पर भाँति-भाँति के रत्न लगे थे—उनके सतरंगी प्रकाश से सारा भवन जगमगा रहा था।

एक स्थान पर खड़ा होकर कुमार सोचने लगा—इस महल में तो अनेक कक्ष हैं। किस में प्रवेश करूँ? चोर कहाँ मिलेगा?

तभी एक युवती एक कक्ष में से निकली। कुमार को देखकर ठिठक गई। कुमार ने भी उसे देखा और देखता रह गया। युवती अत्यन्त सुन्दर और देवताओं का भी मन मोहने वाली थी। कुमार ने उससे पूछा—

सुन्दरी! इस स्थान का क्या नाम है और इसका स्वामी कौन है?

सुन्दरी ने मंदस्मित पूर्वक उत्तर दिया—

युवक! जाने हुए स्थान पर ही मनुष्य जाता है। जब तुम इस स्थान और यहाँ के स्वामी को नहीं जानते तो आ कैसे गये?

मार्ग भूलकर आ भटका हूँ। इसीलिए तो यहाँ के स्वामी को पूछ रहा हूँ।—वज्रगुप्त ने गम्भीरतापूर्वक कहा।

लगता तो ऐसा नहीं है, तुम्हारे हाथ में यह नंगी तलवार कुछ और ही संकेत दे रही है। खैर, यदि तुम पथ-भूले राही हो तो यह बताओ कहाँ से आ रहे हो?—सुन्दरी के मुख पर भी गम्भीरता आ गई।

ऋषभपुर से। संक्षिप्त सा उत्तर दिया वज्रगुप्त ने।

ऋषभपुर का नाम सुनकर युवती के नेत्रों में चमक आ गई। उसने पूछा—

क्या तुम ऋषभपुर के निवासी हो?

हाँ, वहीं मेरा जन्म हुआ है। जन्म से वहीं रह रहा हूँ।

तो तुम नगर-नरेश चन्द्रगुप्त और उनके पुत्र वज्रगुप्त को भी जानते होगे?

जानता तो हूँ किन्तु तुम उन्हें कैसे जानती हो?

लोगों के मुख से उनका नाम सुना है।

स्पष्ट कहो, तुम्हारा उनसे क्या मतलब है? वे तुम्हारे कौन लगते हैं? तुम कौन हो?

सुन्दरी कहने लगी–

मैं श्रावस्ती नगरी के नरेश सुरेन्द्र राजा की पुत्री चम्पकमाला हूँ। बाल्यावस्था में ही मेरा वाग्दान ऋषभपुर नरेश चन्द्रगुप्त के पुत्र वज्रगुप्त के साथ हो गया था। जब मैं युवती हो गई तो यह विद्यासिद्ध चोर मुझे चुरा लाया और यहाँ भूगर्भ में बन्दी बना लिया। अब तो आप समझ गये कि मैं राजा चन्द्रगुप्त और उनके पुत्र वज्रगुप्त को कैसे जानती हूँ।

समझ गया। तो तुम अकेली ही यहाँ बन्दी हो? कैसे रहती होगी? मन भटकता होगा?

नहीं, मैं अकेली नहीं हूँ। यहाँ मुझ जैसी ही अनेक कन्याएँ हैं। हम सब अपने भाग्य को कोसती रहती हैं।

अनेक कन्याओं को बन्दी जानकर राजपुत्र चिंतित हो गया। उसे विचार-मग्न देखकर चंपकमाला ने पूछा–

मेरा परिचय तो जान लिया, किन्तु अपना नहीं बताया। तुम कौन हो और यहाँ किस इरादे से आये हो?

राजपुत्र ने अपना परिचय दिया–

चम्पकमाला! मैं ही वज्रगुप्त हूँ। इस चोर ने ऋषभपुर में भी उत्पात मचा रखा है। इसे खोजता हुआ ही मैं यहाँ तक आया हूँ। अब तुम यह बताओ कि वह विद्यासिद्ध चोर कहाँ है? उसे किस प्रकार मारा जा सकता है?

वज्रगुप्त का नाम सुनकर चम्पकमाला के नेत्रों में हर्ष की चमक आ गई। बोली–

आपने उचित ही किया, जो हम अबलाओं के उद्धार के लिए यहाँ आ गये। इस समय चोर तो बाहर गया हुआ है किन्तु वह बहुत बलवान है और उसे साधारण खड्ग से नहीं मारा जा सकता।

तो फिर? कुमार के मुख पर चिन्ता झलकने लगी।

मैं उपाय बताती हूँ, ध्यान से सुनो।

बताओ।

चम्पकमाला कहने लगी–

उसके आराधना-गृह में एक तलवार रखी है। प्रतिदिन पूजा करके वह उसे अभिमन्त्रित करता है। वह तलवार अनेक विद्याओं और रहस्यमयी शक्तियों से अधिष्ठित हैं। पूजागृह में वह किसी को नहीं जाने देता। सफाई आदि के निमित्त मैं ही जाती हूँ। उस समय भी वह मुझे देखता रहता है। बिलकुल एकान्त में साधना और तांत्रिक क्रियाएँ करता रहता है।

तब तुम्हें कैसे मालूम कि वह उस तलवार को अभिमन्त्रित करता है।

मैंने कई बार छिपकर देखा है।

तो तुम उसकी विश्वासपात्र होकर भी उसे द्वेष रखती हो, उसे मरवाना चाहती हो।

हँसकर चम्पकमाला ने कहा–

कुमार! स्त्री के हृदय की थाह पा लेना सरल नहीं है। वह प्रेम करने वाले को दुत्कार देती है, धन-दौलत को ठोकर मार देती हैं,

अकारण भी प्रेम करती है और सकारण भी। कभी कभी कुरूप के साथ रमण करती है और सुरूप को त्याग देती है। पंडितजन भी उससे भयभीत रहते हैं। स्त्री ठगों को भी ठग लेती है, कुटिलों से भी अधिक कुटिल होती है। क्रूर और हत्यारों को भी अपना दास बना लेती है, विश्वास करने वाले के साथ भी विश्वासघात करती है। अधिक क्या कहूँ–समुद्रतट की बालू के कण गिनना सरल है किन्तु स्त्री के हृदय की थाह पाना कठिन है। वृहस्पति का समस्त ज्ञान और शुक्राचार्य की सम्पूर्ण नीति उनके पाँव के एक नाखून में ही समाई रहती है।

इतनी कुटिल होती है, नारी?

हाँ, उसकी कुटिलता का अनुमान लगाना भी अत्यन्त कठिन है। देवताओं की बुद्धि भी भ्रमित हो जाती है। किन्तु कुमार! जब नारी किसी पुरुष को अपना समर्पण कर देती है तो उसका त्याग और विश्वास भी सीमाहीन होता है। जिस प्रकार उसकी कुटिलता की सीमा नहीं उसी प्रकार सरलता, त्याग और समर्पण की भी सीमा नहीं होती।

विवाद लम्बा हो चला था। राजपुत्र को अपने कर्तव्य की चिन्ता थी। उसने कहा–

चम्पकमाला! स्त्री के गुण-अवगुणों पर तो फिर कभी विचार कर लेना। इस समय तो मुझे वह अभिमन्त्रित तलवार दो।

चम्पकमाला उसे चोर के पूजागृह में ले गई। कुमार ने तलवार की तीन प्रदक्षिणा देकर कहा–

हे खड्ग रत्न! पाप के नाश हेतु तुम मुझे अपनी सम्पूर्ण शक्तियों सहित सिद्ध हो।

उसने वह तलवार उठा ली और अपनी तलवार को उसके स्थान पर रख दिया।

दोनों पूजागृह से बाहर निकल जाए। वज्रगुप्त ने चम्पक माला से पूछा–

चोर कब आता है?

प्रातःकाल के समय और दिन भर यहीं रहता है।

और रात्रि को?

रात को वह बाहर निकल जाता है। जो भी सुन्दर वस्तु या स्त्री उसे दिखाई पड़ जाय, उसे उठा लाता है।

वह किस द्वार से प्रवेश करता है?

द्वार का तो मुझे ज्ञान नहीं, किन्तु आप किस द्वार से आये?

वटवृक्ष के कोटर से।

तो वहीं से वह भी आता होगा।

क्या वहीं एक द्वारा है?

चम्पकमाला कुछ रुखाई से बोली–

कुमार! आप बार-बार द्वार की बात पूछते हैं। यदि हम लोगों को उसका ज्ञान होता तो क्या अब तक इस बन्दी-गृह में ही पड़ी रहती!

कुमार को अपनी भूल का एहसास हुआ। चम्पकमाला का कथन सत्य था। द्वार का ज्ञान होने पर मूर्ख से मूर्ख व्यक्ति भी बन्दी बना नहीं रह सकता। वह अवश्य निकल भागेगा।

चम्पकमाला ने कहा–

राजपुत्र! मैं तो सिर्फ इतना ही जानती हूँ कि जब भी मैंने उसे प्रवेश करते देखा है, वह पहले अपना सिर डालता है। यही अवसर उपयुक्त है अन्यथा वह इतना बली है कि उसे मारना बहुत ही कठिन है।

ऐसा ही करूँगा कहकर कुमार द्वार के समीप ही जमकर बैठ गया। चम्पकमाला भवन द्वार की ओट में उत्सुक हृदय लिए खड़ी हो गई।

रात्रि का अन्तिम प्रहर व्यतीत होने को था। उस समय चोर अपने बिल के समीप आया। कुमार वज्रगुप्त की पत्नी चम्पावती उसके

कन्धे पर थी। वह उसका हरण करके लाया था। चम्पावती विलाप कर रही थी– हे राजा चन्द्रगुप्त! मैं पुत्रबधु हूँ, मुझे बचाओ! अरे नगर-रक्षको इस राक्षस को पकड़ो! हे स्वामी वज्रगुप्त! आप कहाँ चले गए? यह चोर मेरा हरण करके लिए जा रहा है। मुझे इसके चंगुल से छुड़ाओ।

विद्यासिद्ध चोर ने उसे डाँटा–

मूर्खा! कौन किसका रक्षक है? तू और तेरा पति मेरा क्या कर सकता है?

पत्नी का विलाप और चोर की फटकार सुनकर कुमार वज्रगुप्त सोचने लगा–कितना दुराचारी है यह! आज मेरी स्त्री को ही पकड़ लाया। इसका दुस्साहस कितना प्रबल है। राजमहल में जाते भी भय न लगा।

उसी समय उसे चोर का सिर बिल में दिखाई दिया। एक बार तो विचार आया–कर दूँ इसी समय तलवार का प्रहार! बस एक ही बार में सिर धड़ से अलग हो जायेगा और किस्सा खतम। दूसरे ही क्षण उसका क्षात्र-भाव जाग उठा–नहीं, निहत्थे और असावधान शत्रु पर वार करना कायरों का काम है। मैं इसे ललकार कर ही पराजित करूँगा।

उसने पहले विचार को झटक दिया। चोर चम्पावती को कन्धे पर लादे उतरा। कुमार ने उसे ललकारा–

नराधम! अब अपने पापों का दण्ड भोगने को तैयार हो जा।

चोर देखा–सामने एक तेजस्वी युवक खड़ा है। वह पहले तो चकराया, फिर तुरन्त ही अपना कर्तव्य निश्चित कर लिया। गरजकर बोला–

पापी तू है कुमार! चोरी से मेरे अन्तःपुर में घुस आया। मैं अभी तुझे मजा चखाता हूँ।

और वह अपने पूजागृह की ओर लपका। कुमार ने बीच में ही टोका–

भाग कहा रहा है? साहस है तो सामना कर।

निहत्थे को रोक रहे हो! इसी साहस पर शूरवीर बनते हो! शस्त्र ले लूँ फिर देखना।

कुमार ने उसे चला जाने दिया। चम्पावती ने अपने पति को देखा तो उसे साहस बँधा। वह वहीं खड़ी रही। समय की नाजुकता को पहचाना। यह अवसर बात करने का और रो-धोकर पति का ध्यान भंग करने का नहीं था।

चम्पकमाला भी कुमार की इस उदारता से उदास हो गई। वह भी उत्सुक होकर युद्ध का परिणाम विचारने लगी। चोर पूजागृह से अपनी तलवार लेकर निकला और पीछे से ही कुमार पर प्रहार कर दिया। किन्तु कुमार असावधान नहीं था। पैंतरा बदलकर बच गया। मुस्करा कर बोला–

हो तो चोर ही, अपनी आदत कैसे छोड़ सकते हो? विद्या सिद्ध होने पर भी कोई अपना स्वभाव कैसे बदल सकता है?

चोर ने भी उत्तर दिया–

हाँ, सच कहते हो। चोरी और हत्या ही मेरा पेशा है। मैं तुम्हें भली-भाँति जानता हूँ कुमार वज्रगुप्त! अब तुम्हारा प्राणान्त भी मेरे हाथों होगा।

दोनों युद्ध में प्रवृत्त हो गए। विद्यासिद्ध चोर भी बड़ा साहसी और शक्तिशाली था। दोनों ही घात-प्रतिघात करने लगे। घात-प्रतिघातों की भयंकर ध्वनि को सुनकर अन्य युवतियाँ भी भवन द्वार पर आ गई। वे भी दोनों का युद्ध देखने लगीं।

दोनों ही टक्कर के योद्धा थे। हार-जीत का निर्णय न हो पा रहा था। स्त्रियाँ उत्सुक थी। सभी साँस रोके देख रही थी।

जब बहुत देर हो गई तो चम्पकमाला ने कुमार को कहा–

कुमार! इस खड्गरत्न की रहस्यमय शक्तियों का स्मरण करो।

यह सुनते ही चोर काँप गया। उसने समझ लिया कि धोखा हुआ है। मेरा सिद्ध खड्ग इस युवक के हाथ लग गया है। विश्वासघात कर दिया चम्पकमाला ने। गरजकर लपका चम्पकमाला की ओर–

ठहर विश्वासघातिनी! पहले तुझे ही समाप्त कर दूँ।

किन्तु बीच में ही कुमार ने रोक लिया, कहा–

स्त्री पर हाथ उठाते लज्जा नहीं आती पामर! मर्द है तो मर्द का सामना कर।

चोर रुक गया और भरपूर शक्ति से प्रहार करने लगा। कुमार ने मन ही मन खड्ग की रहस्यमयी शक्तियों का स्मरण किया और एक ही प्रहार से चोर का सिर धड़ से अलग कर दिया।

रक्त का फव्वारा छूट पड़ा गर्भगृह में। कुछ देर तक चोर का शव तड़पा और फिर ठंडा हो गया। मौत के भयानक कुहरे में उसकी आत्मा समा गई। भूगर्भ महल में सन्नाटा छा गया–मानो प्रलय के बाद सब कुछ शांत हो गया।

(क्रमशः)

JAIN BHAWAN PUBLICATIONS

P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone: 2268 2655

English :

1. Bhagavati-sutra-Text edited with English translation by K. C. Lalwani in 4 volumes:
   Vol - 1 (satakas 1- 2) Price : Rs. 150.00
   Vol - 2 (satakas 3- 6) 150.00
   Vol - 3 (satakas 7- 8) 150.00
   Vol - 4 (satakas 9- 11) ISBN : 978-81-922334-0-6 150.00
2. James Burges - The Temples of Satrunjaya. Jain Bhawan. Kolkata ; 1977. pp. x+82 with 45 plates Price : Rs. 100.00
   (It is the glorification of the sacred mountain Satrunjaya.)
3. P. C. Samsukha - Essence of Jainism Price : Rs. 15.00
   ISBN : 978-81-922334-4-4
4. Ganesh Lalwani - Thus Sayeth Our Lord, Price : Rs. 50.00
   ISBN : 978-81-922334-7-5
5. Verses from Cidananda
   Translated by Ganesh Lalwani Price : Rs. 15.00
6. Ganesh Lalwani - Jainthology Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-2-0
7. Lalwani and S. R. Banerjee-
   Weber's Sacred Literature of the Jains Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-3-7
8. Prof. S. R. Banerjee
   Jainism in Different States of India Price : Rs. 100.00
   ISBN : 978-81-922334-5-1
9. Prof. S. R. Banerjee
   Introducing Jainism ISBN : 978-81-922334-6-8 Price : Rs. 30.00
10. Smt. Lata Bothra- The Harmony Within Price : Rs. 100.00
11. Smt. Lata Bothra- From Vardhamana- to Mahavira Price : Rs. 100.00
12. Smt. Lata Bothra- An Image of- Antiquity Price : Rs. 100.00

Hindi :

1. Ganesh Lalwani - Atimukta (2nd edn) ISBN : 978-81-922334-1-3
   Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 40.00
2. Ganesh Lalwani - Sraman Samskriti Ki Kavita, Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 20.00
3. Ganesh Lalwani - Nilanjana, Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 30.00
4. Ganesh Lalwani - Chandan-Murti
   Translated by Shrimati Rajkumari Begani Price : Rs. 50.00
5. Ganesh Lalwani-Vardhaman Mahavira Price : Rs. 60.00

6.	Ganesh Lalwani-Barsat ki Ek Raat,	Price : Rs.	45.00
7.	Ganesh Lalwani -- Panchdasi.	Price : Rs.	100.00
8.	Rajkumari Begani-Yado ke Aine me.	Price : Rs.	30.00
9.	Dr. Lata Bothra - Bhagavan Mahavira Aur Prajatantra	Price : Rs.	15.00
10.	Dr. Lata Bothra - Sanskriti Ka Adi Shrote, Jain Dharm	Price : Rs.	24.00
11.	Prof. S.R. Banerjee - Prakrit Vyakarana Praveshika	Price : Rs.	20.00
12.	Dr. Lata Bothra - Adinath Risabdev Aur Asthapad ISBN : 978-81-922334-8-2	Price : Rs.	250.00
13.	Dr. Lata Bothra - Astapad Yatra	Price : Rs.	50.00
14.	Dr. Lata Bothra - Aatm Darsan	Price : Rs.	50.00
15.	Dr. Lata Bothra - Varanbhumi Bengal ISBN: 978-81-922334-9-9	Price : Rs.	50.00
16.	Dr. Lata Bothra - Tatva Bodh	Price : Rs.	

Bengali :

1.	Ganesh Lalwani-Atimukta,	Price : Rs.	40.00
2.	Ganesh Lalwani-Sraman Sanskriti ki Kavita	Price : Rs.	20.00
3.	Puran Chand Shymsukha-Bhagavan Mahavir O Jaina Dharma.	Price : Rs.	15.00
4.	Prof. Satya Ranjan Banerjee Prasnottare Jaina-Dharma	Price : Rs.	20.00
5.	Dr. Jagatram Bhattacharya Das Baikalik Sutra	Price : Rs.	25.00
6.	Prof. Satya Ranjan Banerjee Mahavir Kathamrita	Price : Rs.	20.00
7.	Sri Yudhishthir Majhi Sarak Sanskriti O Puruliar Purakirti	Price : Rs.	20.00

Some Other Publications :

1.	Dr. Lata Bothra - Vardhamana Kaise Bane Mahavir	Price : Rs.	15.00
2.	Dr. Lata Bothra - Kesar Kyari Me Mahakta Jain Darshan	Price : Rs.	10.00
3.	Dr. Lata Bothra - Bharat Me Jain Dharma	Price : Rs.	100.00
4.	Acharya Nanesh - Samata Darshan Aur Vyavhar (Bengali)	Price : Rs.	
5.	Shri Suyesh Muniji - Jain Dharma Aur Shasnavali (Bengali)	Price : Rs.	50.00
6.	K.C.Lalwani - Sraman Bhagwan Mahavira	Price : Rs.	25.00

इसके अलावा जैन धर्म से सम्बन्धित अन्य तीन पत्रिकाएँ :

अंग्रेजी त्रैमासिक पत्रिका	वार्षिक	500.00
ISSN 0021 - 4043	(आजीवन)	5000.00
हिन्दी मासिक पत्रिका	वार्षिक	500.00
ISSN 2277 - 7865	(आजीवन)	5000.00
बंगला मासिक पत्रिका	वार्षिक	200.00
ISSN : 0975 - 8550	(आजीवन)	2000.00

Creators of Prestigious Interiors
Established 1970

Creativity is a Modern Religion

Nahar

Architects, Interiors, Consultants

5B, Indian Mirror Street, Kolkata-700 013
Phone : 2227-5240/45, Fax : 22276356
Email Id : info@nahardecor.com

Vol XXXVII No.07
25th Oct. 2013
TITTHAYARA
Postal Reg. No. KOL.RMS / 70/2013-15
R.N.I. 30181/77